झारखंड प्रदेश में मुण्डारी भाषा और प्रकृति-गीत

डॉ॰ पुष्पा कुमारी*

सारांश -

प्रकृति और मनुष्य के बीच अभिप्रेरक एवं रागात्मक सम्बन्ध का नाम 'गीत' है। मनुष्य नैसर्गिक रूप से प्रकृति के सानिध्य में भावनात्मक लगाव महसूस करता है जिसे वह अपनी मातृभाषा में लोकगीतों के रूप में लयात्मक अभिव्यक्ति देता है। प्राकृतिक सुषमा से समृद्ध झारखंड प्रदेश में प्रकृतिपूजक जनजाति समुदाय जनजातिय भाषा में विभिन्न रागों में प्रकृति-गीत गाते हैं। उनमें से एक मुण्डारी भाषा बोलनेवाली मुण्डारी जनजाति जदुर, मागे, जपी, गेना आदि रागों में अगहन से बरसात तक विभिन्न अवसरों पर प्रकृति के प्रत्येक रूप से सम्बन्धित लोकगीत गाते हैं। ये प्रकृति गीत उनके प्रकृति-प्रेम का प्रतीक है।

कुंजी शब्द - मुण्डारी भाषा, जनजाति समुदाय, लोकगीत, प्रकृति, रागात्मकता, तादात्म्य।

प्रस्तावना -

प्रकृति मनुष्य की सहचरी है। सम्पूर्ण प्राणीजगत का प्रकृति से अन्योनाश्रय सम्बन्ध है। प्रकृति की विभिन्न अभिक्रियाओं से अभिप्रेरित होकर मनुष्य के कंठ से जो स्वर ध्वनियाँ झंकृत होती है, वह लयबद्ध होकर समूचे ब्रह्मांड को उल्लसित कर देती है। अपनत्व एवं प्रेम की अभिव्यक्ति मातृभाषा में अनायास ही हो जाती है। मातृभाषा जनभाषा की परिचायक होती है। गीत मानव मन के कोमल भावनाओं की रागात्मक प्रस्तुति होती है। प्रकृतिचेतना जब लोकचेतना में रूपान्तरित हो जाती है तो उससे लोकगीत जन्म लेता है। लोकगीत, लोकभावनाओं की वाणीगत उद्भावना का गेय रूप है, जो लोकभाषा में लयबद्ध होकर अपनी नैसर्गिक पूर्णता प्राप्त करता है।

प्राकृतिक सुषमा से भरा-पूरा प्रदेश झारखंड में जनजातीय संस्कृति होने के कारण विभिन्न जनजातीय भाषाएं प्रचलित हैं। यहाँ की जनजातीय भाषाओं में मुण्डारी, नागपुरी, पंचपरगनिया,

खोरठा, हो, कुड़माली आदि प्रमुख भाषाओं में विभिन्न प्रकार के प्रकृति-गीत गाये जाते हैं। इन जनजातीय भाषाओं में मुण्डारी एक ऐसी भाषा है जिसे झारखंड प्रदेश के राँची, खूंटी, सरायकेला, खरसांवा, पूर्वी और पश्चिमी सिंहभम क्षेत्र में बहुसंख्यक जनजातियों द्वारा बोली जाती है। इसका सम्बन्ध ऑस्ट्रोसीएटिक भाषा परिवार से है।[1] मुण्डा लोगों की भाषा 'मुण्डारी' कहलाती है, जिसे वे अपनी भाषा में 'होड़ो जगर' कहते हैं।[2] मुण्डारी जनजातीय भाषा के दो साहित्यिक रूप मिलते हैं। पहला- लोक साहित्य और दूसरा- शिष्ट साहित्य। मुण्डारी लोक साहित्य मौखिक रूप में जन-जन में लोकगीतो एवं लोककथाओं के रूप में बिखरा पड़ा है और शिष्ट साहित्य सीमित मात्रा में लिपिबद्ध है। मुण्डारी लोकसाहित्य में लोकगीतों का विशिष्ट स्थान है।

लोकगीत -

सूर्यकान्त पारीक के अनुसार, "आदिम मनुष्य-हृद्य के गानों का नाम लोकगीत है। मानव जीवन की, उसके उल्लास की, उसके उमंगों की, उसके करुणा की', उसके रूदन की, उसके समस्त सुख-दुख की कहानी इसमें चित्रित है।"[3] लोकगीत लौकिक आश्रय पाकर पल्लवित पुष्पित होता हुआ जनप्रिय बन जाता है।

मुण्डा जनजाति और प्रकृति गीत -

मुण्डा जनजाति मूलतः प्रकृति से सम्बद्ध होते हैं। प्रकृति से इनका अपनत्व ही इनकी पहचान होती है। प्रकृति के साथ ये अपना सुख-दुख भोगते हैं। इनके भावुक हृद्य पर इसके प्रभाव संस्कार रूप में पड़े मिलते हैं। सम्पूर्ण प्रकृति इनके संस्कारों में रची-बसी है। प्रकृति के साथ अपने सम्बन्धों की मिठास वे अपनी वाणियों के उद्गार से करते हैं जो मुण्डारी लोकगीतों में अनायास ही देखने को मिलती है। ये गीत समय के साथ स्मृत एवं विस्मृत होते रहते हैं। "मुण्डारी लोकगीतो के विषय में स्मृति के समान विस्मृति की भी परम्परा है। मुण्डा अपने गीतों को किसी पाठशाला में नहीं सीखते। नृत्य के अखरा के मस्त वातावरण में ही नए-नए गीत सीख जाते हैं। कभी-कभी अखरा में विभिन्न गाँवों के नवयुवक सम्मिलित होते हैं और किसी के द्वारा कोई नया गीत गाया जाता है तो दूसरे नौजवान उसे तुरंत सीख लेते हैं। फिर मस्ती तथा नशे के वातावरण में यहाँ से अलग होने पर गीत के कुछ अंशो को भूल भी जाते हैं। किन्तु उनको कोई चिन्ता नहीं।"[4]

झारखंड प्रकृति की गोद में बसा है। इसलिए वहाँ के जनजातीय जीवन में प्रकृति समानान्तर रूप में चलती है। प्रकृति और जनजातीय समुदाय का सहजीवी सम्बन्ध उन्हें प्रकृति-सौन्दर्य का चितेरा बना देता है। प्रकृति के विशाल कलेवर में फूल है तो कांटे भी; फल है तो पत्ते भी। पशु है तो पक्षी भी; हवा है तो पानी भी; कीट है तो पतंगे भी। पेड़ है तो पौधे भी। दावानल है तो जलाशय भी और सम्पूर्ण प्रकृति का प्रतीक पर्व सरहुल भी। इन प्राकृतिक सुषमाओं से लैस

गीत भी वहाँ के जनजातीय समुदाय द्वारा अखरा में साामूहिक नृत्य एवं वाद्य के साथ विभिन्न राग-रागनियों में गाये जाते हैं। ये गीत मुण्डा जनजाति द्वारा मुण्डारी भाषा में भी मिलते हैं। मुण्डारी भाषा के प्राकृतिक गीत किसी विशेष अवसर पर उस विशेष महीने में अखरा में विशेष अवसर पर उस विशेष महीने में गाये जाते हैं। इन गीतों में -

(1) फूल, खुश्बू, कांटा और फल से सम्बन्धित गीत

1. लन्दातन बा (हँसता फूल)

सरजोम बा लुपु रे गतिम् लंग्डत्र अगु रूडाइया।
सुड़ा संगेन दिली-दोंगोब रे संगम लंग्ड़ सुतुः रूड़ाइया।।1॥
गतिम् लंग्ड़ अगुरूडाईया, गतिम लंग्ड़ बा मोसाइया।
संगम लंग्ड़ सुतुः रूडाईया, संगम लंग्ड़ डलि मोसाईया।।2॥

(हँसते फूल सबको मन भाते हैं। इन्हें देखकर चराचर प्रफुल्लित हो जाता है। ऐसे में भला मनुष्य कैसे न आनंदित हो? सरहुल त्योहार में सखुआ फूलों की नई कोपलें आगन्तुकों को आने का न्योता देती है। अखरे पर गाया जानेवाला यह मुण्डारी गीत जदुर राग में अगहन मास से पूरे बरसात तक गाया जाता है।)

2. बा-सोवन (खुश्बू)

चिकन बा मईम बा तादा,
हुरूम सुकु बियूरेन तान.....न.....।
मेरकेन डली न मईम डलि तादा,
लुपुः तेरोम सेकोरेन तान्.....न.....न.....।।1॥
सराजोम बा नेयग्ड़ बा तादा,
हुरूम सुकु बियुरेन तान.....न.....।
सुड़ा संगेन नपग्ड़ डलि तादा,
लुपुः तेरेम सकोरेन तान्.....न.....न.....।।2॥

(जुड़े में खोंसे हुए फूलों की खुश्बू से युवती के चारों ओर मधुमक्खी मंडराने लगे हैं। पिता द्वारा जुड़े में खोंसे हुए फूलों के नाम पूछे जाने पर युवती बताती है कि यह खुश्बु उसके जुड़े में खोंसे हुए सखुआ के कोंपलों और फूलों से आ रही है। फूलों की खुश्बू से भरे इस मुण्डारी गीत को अखरा पर गेना राग में अगहन से बरसात तक गाया जाता है।)

3. जनुम (काँटा)

जनुम-जनुम गो, सीस गोर जनुम दो,
नाड़ी-नाड़ी गो बलेः सेयाड़ी नाड़ी।।1॥
जनुम् लेनईग्ड़गो सीसगोर जनुमेते,
बकोः लेर्नईंडत्रगो, बलेः सेयाड़ी नाड़ीते।।2॥
हसुईग्ड़ जद् चरि बीरी गो,
बबता जदईग्ड़ टुन्डेग्ड़-गेनेर।।3॥
नेगईग्ड़ मेनः कोए ओंग ओंग मोनिंग्ड़,
नपुईग्ड़ मेनः सपारेन सनईग्ड़।।4॥

(जब बात फूलों की हो तो खुश्बू का होना स्वाभाविक है। किन्तु फूलों के साथ काँटो का सम्बन्ध सुख और दुख के समान है। दोनों की उपस्थिति से ही जीवन सम्पूर्णता प्राप्त करता है। काँटे रूपी दुख से त्रस्त होकर मनुष्य माता-पिता अथवा अभिभावक की कोमल, शांत छाया तलाशता है। इस गीत में इसी भाव की अभिव्यक्ति हुई है। काँटो के विषय में गेना राग में गाया यह मुण्डारी गीत अगहन मास से बरसात के प्रारंभ तक अखरा पर गाया जाता है।)

4. <u>जो (फल)</u>

डाड़ी नोरा जोजो हेसः हो,
हेसः गतिंग्ड़ नुयुयाईगमें.....ए.....ए.....ए.....।।1॥
कोलोम जप हेरो बारू हो,
बरू संगईंग नुयुयाईगमें....ए.....ए.....ए.....।।2॥
नुयुः दोरेंग नुयुः मेया हो,
ओको कोरेंग्ड़ नुयु मेया .....अ.....अ.....अ.....।।3॥
नोसारे दोरेंग्ड़े नोसोरा मेया,
चिमय कोरेंगड़ नोसारो.....अ.....अ.....अ.....।।4॥
सेरेग्ड़ रेगेईंग्ड़ नुयुः मेया हो,
सेरेग्ड़-सेरेग्ड़ सोवाना.....अ.....अ.....अ.....।।5॥
नोते रेगेईंड नोसोरा नेया हो,
नोते-नोते सिंड़िंगा.....अ.....अ.....अ.....।।6॥

(झारखंड के जनजाति समुदाय जल, जंगल और जमीन से जुड़े लोग हैं। ऐसी स्थिति में इन्हें प्राकृतिक फलों के विभिन्न रूप एवं प्रकार देखने को मिलते हैं। इस गीत में दो सखी

आपस में वार्तालाप करते हुए कहती है कि चुआँ अर्थात् कुँआ जानेवाले रास्ते में खट्टा पीपल का जो पेड़ है उसका फल तथा खलिहान के किनारे बुढ़ाउ कुसुम का पका फल तोड़कर गिराओगी और मुझे उपलब्ध कराओगी। तो दूसरी सखी कहती है कि मैं जरूर गिराऊँगी और उपलब्ध भी कराऊँगी, किन्तु यदि वे फल पत्थर पर गिरते हैं तो जमीन सुगंधित हो जायेगा। ऐसी स्थिति में फल की खुश्बू तो छिन्न-भिन्न हो जायेगी और मैं तुम्हें फल को उसकी सम्पूर्णता में नहीं दे पाऊँगी। इस बात का मुझे अफसोस रहेगा। फल के विषय में यह गीत अखरा पर गेना राग में अगहन से बरसात तक गाया जाता है।)

(ब) पशु, पक्षी, कीट एवं हवा से सम्बन्धित गीत

5. कुला-विंग (नाग और बाघ)

बेंगड़ा-बकड़ी मरची-बकड़ी,
कुला ना कुलाए हग्डे-हग्ड़ा, हैरी.....ई.....ई.....।
बेंगड़ा-बकड़ी मरची-बकड़ी,
बिंग ना बिंग सो-सोवाँ, हैरी.....ई.....ई.....।।1॥
ओकोए गे हुआः कियः
कुला ना कुलाए हग्डे-हग्ड़ा, हैरी.....ई.....ई.....।
चिमै गे सोदोर कियः
बिंग ना बिंग सों-सोबा, हैरी.....ई.....ई.....।।2॥
दासी कोड़ाए हुआः किया,
कुला ना कुलाए हंग्ड़-हंग्ड़ा, हैरी.....ई.....ई.....।
कमड़ी कुडिः सोदोर कियः
बिंग ना बिंग सो-सोंवा, हैरी.....ई.....ई.....।।3॥

(मुण्डा जनजाति का सम्बन्ध मूलतः जंगल से रहता है। अतः जंगली जीव-जन्तुओं से उनका सामना आए दिन होते रहता है। इस गीत में बताया जा रहा है कि बैगन और मिर्च की क्यारी में भी बाघ दहाड़ रहा है, काला नाग सों-सों कर रहा है। पता नहीं कब दहाड़ता हुआ बाघ किसे उठाकर अपना शिकार बना ले और सों-सों करता नाग किसे डँस ले। अर्थात् उनका जीवन हमेशा खतरे में ही रहता है। मागे राग में अखरे पर अगहन से बरसात तक जानवरों के विषय में यह मुण्डारी गीत गाया जाता है।)

6. सालू चेणें (सालू पक्षी)

होरा एदेल गोंगोर सालू दो
डारेन कुटुम्बा बड़ेजा पिउर।।1॥
लेयोन् लेयोना गोंगोर सालू दो
जुकुन-जुकुन बड़ेजा पिउड़।।2॥
पिड़िगी चेतनेर होएवो हड़ागु लीः
चौरा लतरेरे रम्पी नोसोर लीः।।3॥
चीतेम् अयुम् लीः गोंगोर सालू दो
मेरे तेम नतेन लीः बड़ेजा पिउड़।।4॥
रिचि गुगुरा रिड़िंग केन दो
बसेरा डम्बरकोम रडंग्ड़ केन्।।5॥

(रास्ते के किनारे सेमल की चोटी पर बैठा सालू जाति का एक पक्षी गोंगोर, सालू एवं तराई पर के वट व्क्ष पर फुदकता पिउड़ को हवा उड़ाकर छत के अहाते पर ले आई और हवा की तेज आंधी पिउड़ पक्षी को चौराहे पर ला दिया। ग्रामीण एक-दूसरे से पूछते हैं कि आखिर तुमने उन पक्षियों को पहचाना कैसे? तो प्रत्युत्तर में पता चलता है कि उन पक्षियों से के पैरों से घूंघरू बनजे और उनके गाने से एक विशेष बाद्य यंत्र डम्बरकोम की गूंज निकल रहे हैं। यही उन विशेष पक्षियों की विशेष पहचान है। सालू एवं पिउड़ पक्षी के विषय में अगहन मास से बरसात तक जदुर राग में सभी अवसरों पर गाया जानेवाला यह गीत, पक्षी विशेष के प्रति आकर्षण का गेय रूप है।)

7. उरू (कीट)

बोलो मेजा नुरू बोलो में,
रबंग्ड नुरू राबंग्ड़ा।
सोड़ो मेजा नुरू सोड़ो में रेयाड़
नुरू रेयाड़ा हायरी हा.....॥1॥
किचिर दो हिन्दिल दिपिल
चिका लेकाईग्ड़ा बोलोवा।
पैलो दो जिंपिर-जिटः मेरे
लेकाईग्ड़ सोड़ोव हायरी हा.....।।2॥
तरा कोचाईंग बोलो केन,
तरा कोचा हनारिंग्ड़ को।

तरा कोचाईंग सोड़ो केन तरा
कोचा किमिनिंग्ड़ को हायरी हा..... ।। 3॥

(मागे राग में गाये इस गीत में कीट के बारे में अखरे पर अगहन से बरसात तक मुण्डा जनजाति वास्तव में अपनी दयनीय अवस्था को ही वर्णन करते हैं। जाड़े का मौसम आनेवाला है। ठंड ज्यादा होने की आशंका से मुण्डा व्यक्ति कीटों को सम्बोधित करते हुए कहता है कि कीट तुम बिल में छिप जाओ क्योंकि तुम्हें तो प्रकृति ने शारीरिक बनावट में ही ऐसी सुरक्षा प्रदान कर दी है जिससे तुम बिल में भी सुरक्षित रह सकते हो। हम जनजाति मनुष्यों के तो कपड़े भी फटे-पुराने हैं। मैं कैसे बिल में जा सकता हूँ। जनजाति औरतों की भी ऐसी ही बदहाल जिंदगी है। उनकी साड़ी भी खेतों में काम करने के कारण भींगी और सड़ी हुई है। हमारा घर भी तो बहुत छोटा है। उसमें कहीं एक ओट में मेरी माँ बैठी है तो दूसरे कोने में मेरी बहू। अब मैं आर्थिक तंगी में अपने एवं अपने परिवार के लिए बड़ा घर एवं सुख-सुविधा के समान कैसे जुटा सकता हूँ?)

8. होएवो दुदुगर (हवा का झोंका)

नोको बुरूए होयवो लेदा
सिंजु सकम नोटोग्ड़े लेना।
चिमै बेड़ा रम्पि लेंद्,
मदे बुरम दोपली लेना।। 1॥

सिंजु बंरूए होएवो लेदा
सिंजु सकम नोटाग्ड़े लेना।
मदे बेड़ाए रम्पि लेद।
मदे बुरम दोपली लेना।। 2॥

(मागे राग में हवा के झोंके के विषय में गाये इस गीत में कहा गया है कि हवा किस दिशा से चली कि पहाड़ पर का बेल पत्ता डोल गया और किधर से तूफान आया कि तराई पर बाँस की सूखी पत्ती उड़ गई। जवाब है कि बेल पहाड़ की दिशा से आये हवा के झोंके ने पहाड़ पर की बेल पत्ती को डोला गयी और बाँसवाली तराई की तूफान ने तराई पर बाँस की सूखी पत्ती को उड़ा दिया।)

निष्कर्ष:-

इस प्रकार मुण्डारी भाषा के गीतों में प्रकृति के सभी रूप यथा- पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, कीट-पतंग, हवा-वारिस, आँधी-तुफान-दावानल, ताल-तलैया, नदी, पहाड़, पर्वत,

हरियाली, घास-पत्ते आदि मिलते हैं। ये गीत बहुत हद तक मुण्डारी भाषी जनजातीय लोगों की प्रकृति से भावनात्मक सम्बन्ध की रागात्मक अभिव्यक्ति होती है। इन गीतों के माध्यम से झाारखंड प्रदेश की प्रकृति से रू-ब-रू होने का आभास मिलता है।

संदर्भसूची -

1. https://hi.wikipedia.org
2. डॉ॰ सुभाष चन्द्र मुण्डा,पंचपरगना के मुण्डाओं पर हिन्दु धर्म का प्रभाव, 2003, पृ0- 42
3. सूर्यकान्त पारीक, राजस्थान के लोकगीत (पूर्वाद्ध) प्रस्तावना, पृ0- 1, 2
4. श्री जगदीश त्रिगुणायत, बाँसुरी बज रही, पृ0- 04
5. मुण्डारी गीतों का झारखंड के जनजातीय ग्रामीणों से निज संकलन

*वरीय सहायक प्राध्यापक; हिन्दी विभाग; सुन्दरवती महिला महाविद्यालय, भागलपुर, बिहार।